चैतन्य लहरी

1991

खंड 3 अंक 9

हिन्दी आवृत्ति

"..... सामूहिकता हमारे उत्थान का मूला-धार है । यदि आप ध्यान केन्द्र पर नही आते हैं, यदि आप सामूहिक नही हैं, यदि आप परस्पर मिलते जुलते नही तो आप अंगुली से कटे हुए नाखून की तरह हैं और परमात्मा को आपसे कुछ नही लेना-देना ।"

श्री माताजी निर्मला देवी

विषय सूची

		पृष्ठ संख्या
1	"ध्यान धारणा" पर श्री माता जी निर्मला देवी का वार्तालाप नयी दिल्ली-1976	1
2	शिव रात्रि पूजा, इटली - 17·2·91	5
3	महावीर पूजा, पर्थ - 28·3·91	9
4	ईस्टर पूजा, सिडनी-आस्ट्रेलिया - 31·3·91	12
5	गौरी पूजा, आक्लैंड-न्यूजीलैंड - 8·4·91	15
6	विराट पूजा, मैलबोर्न - 10·4·91	19

"ध्यान-धारणा" पर श्री माताजी निर्मला देवी का वार्तालाप
नई दिल्ली-1976

हम ध्यान कर नही सकते, हम केवल ध्यान में हो सकते हैं । हमारा यह कहना, कि हम ध्यान करने लगे हैं, अर्थहीन है । हमें ध्यान में होना है । आप या घर के अन्दर हो सकते हैं या बाहर । घर के अन्दर होते हुए आप यह नही कह सकते मैं घर से बाहर हूँ । और घर से बाहर होने की अवस्था में आप यह नही कह सकते कि मैं घर के अन्दर हूँ । इसी प्रकार आप अपने जीवन के तीन आयामों में चल रहे हैं भावनात्मक, दैहिक एवं मानसिक । आप अपने अन्तस - स्थापित नही है । परन्तु आपके अपने अन्दर होने का अर्थ है आपका निर्विचार समाधि में होना । तब आप केवल वहीं न होकर सर्वत्र होते है । क्योंकि यही वह स्थान तथा बिन्दु है जहां आप वास्तव में सर्वव्यापक है । यहां से आप मूल, शक्ति या स्रोत से जुड़े होते हैं । यह शक्ति हर पदार्थ के कण-कण में, भावना रूपी हर विचार में, पूरे विश्व की हर योजना और विचार में व्याप्त हो जाती है । इस सुन्दर पृथ्वी की रचना करने वाले सभी सूक्ष्म तत्वों में आप प्रवेश कर जाते हैं । आप ध्वनि में, प्रवेश कर सकते हैं परन्तु आपकी गति अति मन्द होती हैं ।

जब कहते हैं "मैं ध्यान कर रहा हूँ" तो इसका अर्थ है कि आप सर्वव्यापक शक्ति के साथ क्रम परिवर्तन (परम्यूटेशन) में चल रहे हैं । पर आप स्वयं को गतिशील नहीं कर रहे, आप केवल अपने उस बोझ को उतार फेंक दे रहे हैं जो आपके चलने में बाधक है । ध्यान में जब आप होते हैं तो स्वयं को निर्विचार समाधि में रहने दीजिए । वहां (उस अवस्था में) स्वयं अचेतन, स्वयं चैतन्य आप की देखभाल करेगा । चैतन्य की शक्ति से आप गतिशील हो जांयगें । अचेतन यह कार्य करेगा और जहां आपको ले जाना चाहेगा ले जायगा । आप सदा निर्विचार समाधि में रहने का प्रयत्न करें । निर्विचार समाधि में जब आप होते है तो आपको ज्ञान होना चाहिए कि आप परमात्मा के साम्राज्य में है । तथा परमात्मा की गति, उनकी व्यवस्था, उनकी चेतना आपकी देखभाल करेगी ।

मैंने देखा है कि दूसरों में चैतन्य संचार करते समय भी आप निर्विचार समाधि में नही होते । निर्विचार समाधि में रहते हुए यदि आप किसी को चैतन्य लहरियां देंगे तो आपको कोई पकड़ नही आएगी । आपके इन तीन आयामों (भावनात्मक, दैहिक तथा मानसिक) में होने के कारण ही यह तत्व (मृत-आत्माएं) और भौतिक समस्याएं आप में प्रवेश कर जाती हैं । सहजयोग के माध्यम से आपने अपने अस्तित्व के द्वार खोल लिए है । आप अपने साम्राज्य में प्रविष्ट हो गये हैं, परन्तु आप वहां टिकते नही, इससे बाहर आ जाते हैं, और फिर वापिस जा कर शान्त हो जाते हैं । कोई बात नही, आपको निराश और हतोत्साहित होने की आवश्यकता नही । आप जानते हैं कि हजारों वर्ष (परीश्रम) तपस्या करने पर भी लोग अपने को अपने अस्तित्व से अलग न कर सके ।

श्री गणेश की तरह से बनाये गये आप सहजयोगी-जन ही दूसरे लोगों को जागृती एवं साक्षात्कार दे सकते हैं ।

स्वयं पकड़ में होते हुए भी, आपने देखा होगा, आपमें शक्तियां होती है । जब आप कहते हैं कि लहरियां नही आ रही है, तब भी आप में शक्ति होती है । आप दूसरों को साक्षात्कार दे सकते हैं । आपकी

उपस्थिति में लोग साक्षात्कार प्राप्त करते हैं । परन्तु आपको पूर्णतया वही शक्ति बनना है । मान लो कि आपकी कार में कोई खराबी है, जब तक यह चलती रहती है तब तक ठीक है । हमें इसे ठीक करना है, अपनी मूर्खता, कामुकता, लोलुपता तथा अन्तस में मिथ्या तदात्मय से हमने स्वयं को जो घाव दिए है उनका उपचार हरसमय करना है । हमारा पूरा चित्त अपनी दुर्बलताओं पर होना चाहिए, उपलब्धिओं पर नही । दुर्बलताओं का ज्ञान होना अच्छा है, तभी हम वास्तव में अच्छी तरह पार हो पाएंगे ।

मान लो किसी समुद्री जहाज में कोई सुराख है जिसमें से पानी अन्दर आ रहा है तो पूरे कर्मीदल का और कप्तान का ध्यान उसी सुराख पर ही होगा । इसी तरह आपको भी सावधान रहना है । मैंने देखा है, सहजयोगियों के लिए बहुत भयानक पतन भी हैं । निसन्देह भूत (काल) पर काबू पाया जा सकता है, पर उनके वर्तमान पर भी पिछले संस्कारों की कई परछाइयां हैं । उदाहरणतः समूह में जब आप बैठते हैं तो परस्पर उलझे होते हैं । चाहे किसी भी प्रकार के संबंध से आप एक दूसरे से लिप्त हों, आपको पता होना चाहिए कि लिप्सा किसी भी तरह आपको व्यक्तिगत उत्थान में सहायक न होगी ।

सामूहिक रूप से तथा सम्पर्क द्वारा परस्पर सम्बन्धित होते हुए भी हर व्यक्ति अलग-अलग (व्यक्तिगत रूप से) उत्थित हो रहा है । यह उत्थान व्यक्तिगत है, पूर्णतया व्यक्तिगत । अतः याद रखिए कि आप अपने बेटे, भाई, बहन, पत्नी, मित्र आदि किसी के भी उत्थान के लिए जिम्मेवार नही । उत्थान के लिए आप उनकी सहायता नही कर सकते । केवल श्री माताजी की कृपा, और उनकी अपनी शुद्ध इच्छा तथा प्रयत्न ही उन्हें इन तीन आयामों से छुटकारा पाने में सहायक होंगे ।

अतः जब भी कोई विचार आपको आता है तो जान ले कि अभी तक आप निर्विचार समाधि पूर्णतया प्राप्त नही कर सके । यही आपकी इन तिहरी-समस्याओं का कारण है ।

कभी-कभी सहजयोगी के मस्तिष्क में कोई भावुकता आ जाती है । यह उदासी, हतोत्साह की भावना होगी और उसे अपने या दूसरों से विरक्ति (घृणा) हो जायगी । दोनों ही प्रतिक्रियाएं एक सी हैं ।

मैंने देखा है कुछ सहजयोगी दूसरों से अतिविरक्त होते हैं । यह भावना स्थायी नही होनी चाहिए । कभी कही आप में यह भाव आ जाय तो ठीक है, यह स्थायी नहीं है । आपकी अपने प्रति विरक्ति भी स्थायी नही । परन्तु यदि आप सदा इसी भावना के लिए ललायित रहते हैं तो अपने लिए बन्धन बना रहे हैं । इसका मतलब है कि आप निर्विचार समाधि में नही हैं । इसका अर्थ है कि आप भूतकाल में हैं । अपने भूतकाल को आप अपने मस्तिष्क पर ठोस-आधार बना रहे हैं । वर्तमान में हर परिवर्तनशील वस्तु (भाव) व्यर्थ है । वर्तमान में केवल शाश्वत ही टिकता है, बाकी सब छंट जाता है । यह बहती हुई नदी के समान है जो कही रूकती नही । बहती नदी शाश्वत (निरन्तर) है, शेष सब कुछ परिवर्तन शील है । यदि आप शाश्वत में स्थित हैं तो यह सभी कुछ जो परिवर्तनशील है, परिवर्तित होकर छंट जायगा । विघटित होकर समाप्त हो जायगा । हमें अपने गौरव तथा महत्व को समझना है । सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि सहजयोगी परमात्मा द्वारा चुने गये लोग हैं ।

दिल्ली शहर में लाखों लोग हैं । पूरे विश्व में अत्याधिक जन संख्या के कारण परेशान बहुत लोग हैं । परन्तु सहजयोग में बहुत ही कम लोग है । जब आपको चुन ही लिया गया है तो आपको ध्यान रखना

आप ही आधार के वे पत्थर हैं जिन्हें नीवों में लगाया जाना है;

है कि आप आधार हैं, आपको सशक्त एवं सहनशील होना होगा । इसी कारण यह आवश्यक है कि थोड़े से लोग जो आप हैं, जो कि प्रारम्भिक दीप हैं और जो विश्वभर के अन्य दीपों को प्रज्वलित करेंगे, आपको अमरत्व की शक्ति का, दैवी-प्रेम की शक्ति का तथा सर्व व्यापक अस्तित्व, जो कि आप स्वयं हैं, की शक्ति का आनन्द लेना है ।

यही ध्यान है ।

सहजयोगी मुझ से पूछते हैं कि ध्यान करने के लिए क्या करें ? आप निर्विचार समाधि में रहिए, बस । उस वक्त कुछ भी मत कीजिए । आप केवल लक्ष की ओर ही नही बढ़ रहे, परम चैतन्य मात्र आपकी देखभाल का भार ही नही ले रहा, परन्तु इसके साथ पहली बार आप प्रकृति में, वातावरण में, तथा आपसे निरन्तर सम्बन्धित लोगों में दैवत्व का प्रसार कर रहे हैं । यही एक कार्य है जो हमें करना है ध्यान की विधि अति सहज है ।

इसके अतिरिक्त हम प्रार्थना तथा पूजाएं करते हैं । पूर्ण समर्पण से, हृदय से परम् प्राप्ति की याचना के लिए की हुई प्रार्थना भी स्वीकार होती है । केवल याचना मात्र कीजिए, बाकी सब हो जायगा ।

पिछले संस्कारों तथा भविष्य की आकांक्षाओं के कारण सहजयोगियों को समस्याओं का सामना करना पड़ता है । सहजयोग में आपने सीखा है कि जब भी कोई समस्या हो उसका समाधान कैसे करें । ध्यान करने के अतिरिक्त भी बहुत सी विधियां हैं । आप इन्हें भलि-भाँत्ति जानते हैं । आपको चक्रों तथा कुण्डलिनी की स्थिति का ज्ञान होना आवश्यक है । किसी चक्र के दोष के कारण यदि कुण्डलिनी रूक गयी है तो हमें हतोत्साहित नही होना चाहिए । यदि आपकी कार रास्ते पर बिगड़ जाय तो परेशान होने से क्या लाभ होगा ? आपको इसकी रचना (यंत्र की बनावट) का ज्ञान प्राप्त करना होगा, एक कुशल कारीगर बनना होगा, तब आप इसे कुशलता पूर्वक चला सकेंगे । अतः सहजयोग की सभी विधियों का ज्ञान तथा उनमें निपुणता प्राप्त करना आवश्यक है । इस ज्ञान में निपुणता आप केवल इसे दूसरों को देकर, उनसे सीख कर अपने तथा दूसरों को दोष मुक्त करके पा सकते हैं ।

हतोत्साहित होने की कोई बात नही, यह बहुत बुरी बात है । स्वयं से निराश तथा अप्रसन्न होने पर समस्याएं खड़ी हो सकती हैं । आपको अपने पर हँसना चाहिए । अपनी बिगड़ी हुई यंत्र-रचना पर हँसना चाहिए । इस यंत्र से भी यदि आप स्वयं को पहचानना शुरू कर दें तो भी आप विलीन हो जाते हैं । न आप चक्र रहते हैं न माध्यम (चैनल) आप ही चेतना बन जाते हैं ।

आप ही शक्ति हैं और आप ही कुण्डलिनी । अतः आपको किसी भी अव्यवस्थिति की चिन्ता नही करनी चाहिए । यदि कुछ अव्यवस्थित है भी तो आप उसे ठीक कर सकते हैं ।

अभी-अभी बिजली चली गयी थी । बत्ती यदि स्रोत से ही कट गई है तो यह गंभीर बात है । परन्तु किसी फ्यूज आदि की खराबी से यह हुआ है तो आप इसे ठीक कर सके हैं । आपके चक्र यदि खराब भी हैं तो भी चिन्ता की कोई आवश्यकता नही ।

सहजयोग में चिन्ता करना तथा स्वयं को हतोत्साहित करना गलत दृष्टिकोण है । दूसरे शब्दों में सहज का अर्थ है "सुगम-मार्ग" । सहज तथा सहज होने का अर्थ है "जाहि विधि राखो ताहि विधि रहिए" । इस प्रकार का दृष्टि कोण आपके चित्त को अन्तर्मुखी करता है । बाह्य भाग को भूल जाइये, इसकी हमें कोई चिन्ता नहीं ।

"जैसे आप मुझे रखेंगी, मैं वैसे ही रहूँगा", और आप आश्चर्य चकित रह जायंगे कि सब कुछ अच्छा हो गया है, ठीक हो गया है । कभी-कभी आप पाते हैं कि आप कहीं पहुँचना चाहते थे नहीं पहुँच पाये, कोई भजन लिखना चाहते थे - नहीं लिख पाये, कोई वस्तु पाना चाहते थे - आपको नहीं मिली, यह सब आपको परमात्मा की इच्छा समझ कर स्वीकार करना चाहिए ।

ठीक है । परमात्मा की यही इच्छा थी । वे यही चाहते थे । ऐसी अवस्था में आपकी एकाकारिता परमात्मा की इच्छा से हो जाती है । पूरे विश्व में परमात्मा की इच्छा का प्रसार करने के लिए ही आप पृथ्वी पर विद्यमान हैं । इस स्थिति में पहुंच कर भी यदि आप अपनी इच्छाएं तथा अपने विषय में विचार बनाने शुरू कर देंगे तो कब आप परमात्मा की इच्छा बन पायेंगे ?

इस "मैं" (अहं) भाव को जाना ही होगा । यही "ध्यान-धारणा है । यहां अब आप "मै" नहीं रहे, "आप" बन गये हैं ।

महत्वपूर्ण सूचना

1. सहज आडिओ के पते को निम्नलिखित रूप से ठीक कर लें :-

सहज आडियोज्,
ए-16, महेन्द्रू एन्कलेव
दिल्ली-110009. फोन - 7124730

आडियो कैसेट - (स्वयं लेने पर) 40/- रू. प्रति कैसेट
डाक द्वारा 45/- रू. प्रति कैसेट

2. यदि डिमांड ड्राफ्ट या चैक भेजें जायं तो उन पर नाम ठीक तरह लिखा होना चाहिए । ऐसा न होने पर इन्हें वापिस भेज दिया जायगा । कृपया एक बार फिर नाम नोट कर लें :-

(अ) सहज आडियोज्
(ब) सहज वीडिओज्
(स) चैतन्य लहरी

शिव रात्री पूजा, इटली - 17.2.91
परम पूज्य श्री माताजी निर्मला देवी के भाषण का सारांश

शिव अर्थात् आत्मा रूप में हमारे अन्दर प्रतिबिम्बित सादाशिव की पूजा करने के लिए हम एकत्रित हुए हैं । ये हमारे हृदय में प्रतिबिम्बित हैं । आत्म तत्व की प्राप्ति ही हमारे जीवन का लक्ष है । प्राचीनकाल में आत्म ज्ञान प्राप्त करने वाले साधकों को शरीर की अवहेलना तथा प्रताड़ना करने को कहा जाता था । उनके शरीर सूख कर कंकाल मात्र रह जाते और बिना निवार्ण प्राप्ति के वे चल बसते ।

इन्द्रियों के सुखों की ओर खीचने वाले मन का नाश निर्वाण प्राप्ति की एक अन्य विधि थी । मन की किसी भी बात को मत मानिये । कहिए "नेति" । परन्तु सहजयोग में इसके विपरीत है । जैसे भवन के शिखर को बनाने के बाद उसकी नींव बनाना । सर्व प्रथम अपने सहस्रार को खोलना है और फिर उसके प्रकाश में स्वयं को देखना । शनैः शनैः आप चैतन्य लहरियों से परिचित हो जाते हैं तथा देखने लगते हैं कि "मुझे इसकी क्यों आवश्यकता है ? मेरा चित्त सुख-सुविधाओं, खान पान और उच्चाकांक्षाओं की ओर क्यों जाता है ?" तब आप दूसरों की गलतियों को देखने का प्रयत्न नहीं करते । आप स्वयं को देखने लगते हैं क्योंकि आपने अपना उत्थान प्राप्त करना है ।

हृदय आत्मा का मन्दिर है । यही शिव का स्थान है । ईड़ा, पिंगला और सषुम्ना नामक तीन नाड़ियों के विषय में तो आप जानते ही हैं, परन्तु हृदय में चार नाड़ियां हैं । एक नाड़ी मूलाधार को जाती है । यदि आप मूलाधार की सीमा को लांघेंगे तो यह नर्क को जाती है । इसी कारण शिव को ध्वंसक (महाकाल) कहते हैं । मांगने मात्र से आपको विनाश मिलता है । फल लगने पर फूल की पंखुड़ियां विध्वस्त लगती है । मैंने भी बहुत से बन्धन, अहं तथा भ्रान्तियों का नाश किया है । सौन्दर्य उदय के लिए इनका विनाश आवश्यक था । एक सीमा से अधिक मर्यादाओं का उलंघन करने पर आप स्वविनाश की ओर चल पड़ते हैं । चार नाड़ियों की तरह चार दिशाओं में विनाश की रचना हुई है । नर्क की ओर जाने वाली पहली नाड़ी के जरिये किस प्रकार हम इस विनाश को रोकें ।

निष्कपटता शिव का एक गुण है । बाल-सम वे अत्यन्त अबोध हैं । वे साकार अबोधिता हैं । हमें अपनी विषयासक्तियों को अबोधिता के सागर में डुबो देना है । अबोधिता को समझ कर, महत्व देकर इसका आनन्द उठाना चाहिए । पशु तथा बच्चे अबोध होते हैं । इन सब बातों पर अपना चित्त दें । सड़क पर चलते हुए आप क्या देखें ? आप अपनी दृष्टि पृथ्वी से केवल तीन फुट ऊंची रखें । इस ऊंचाई पर आपको फूल, हरी घास और बच्चे दिखाई पड़ेंगे । तीन फुट से ऊंचे लोगों को देखने की आवश्यकता ही नहीं । जो व्यक्ति अबोध नहीं उसकी टांगों तक आप चाहे देख लें उसकी आंखों में न देखें । इस इच्छा को अबोधिता में लीन कर दें । मूलाधार अबोधिता है तथा पवित्र धर्म परायणता । यह श्री गणेश का गुण है । मनुष्य की भांति इस विश्व में रहते हुए, चाहे आप बालक न भी हो तो भी अभी तक आप अबोध हैं । जैसे एक बार श्री कृष्ण की सोलह-हजार और पांच पत्नियों ने एक प्रसिद्ध महात्मा को मिलना चाहा । रास्ते में नदी में बाढ़ के कारण वे उसे पार नहीं कर पाई । वापिस आकर उन्होंने श्री कृष्ण से नदी पार करने की विधि पूछी । तो श्री कृष्ण ने उनसे कहा कि नदी से जाकर कहो कि " यदि श्री कृष्ण योगेश्वर हैं और

ब्रह्मचारी भी, तो पानी नीचे आ जाय ।' नदी से इस प्रकार कहने पर नदी का पानी घट गया । नदी पार कर वे महात्मा के पास गयी, उसकी पूजा की । पर लौटते हुए उन्होंने नदी को फिर चढ़े हुए पाया । अब उन्होंने उस महात्मा से पूछा कि नदी को कैसे पार करें ? उसने पूछा कि वे आयी कैसे थी तो उन्होंने श्री कृष्ण की कहानी बताई । महात्मा ने कहा कि जाकर नदी से कहो कि मैंने कुछ नही खाया । वे बहुत हैरान हुई क्योंकि अभी उन्होंने उस महात्मा को बहुत कुछ खिलाया था । जब उन्होंने नदी से महात्मा की बताई बात कही तो नदी ने उन्हें रास्ता दे दिया । अतः संसार में पति-पत्नि आदि की तरह रहते हुए भी आप अबोध हो सकते हैं । यही पवित्रता की निशानी है ।

दूसरा मार्ग इच्छा का है जो व्यक्ति को विनाश की ओर ले जा सकता है । इसी कारण महात्मा बुद्ध ने कहा था कि केवल इच्छा-विहीनता से ही लोग बुढ़ापा, रोग तथा चिन्ता से बच सकते हैं । इच्छा किसी भी प्रकार की हो सकती है, केवल भौतिक ही नहीं मानसिक भी, ('यह स्त्री मैंने अवश्य प्राप्त करनी है' आदि) यह केवल मोह वश ही नही होता, बाहुल्य की इच्छा से भी होता है । इच्छाएं बढ़ती जाती है पर मनुष्य कभी न प्रसन्न होता है और न ही सन्तुष्ट।इसका कारण क्या है ? क्योंकि यह शुद्ध इच्छा नही है । यह अशुद्ध है । इस तरह की इच्छाएं जब बढ़ने लगती हैं तो हिटलर तथा सद्दाम हुसैन की तरह हम भी भटक सकते हैं । दूसरों पर प्रभुत्व जमाना भी एक अन्य इच्छा है । इस प्रकार की इच्छाओं में आनन्द तथा प्रसन्नता के अभाव के कारण अन्ततः यह विनाश की ओर ही ले जाती हैं । उदाहरणतः मैं एक साड़ी लेना चाहती हूं । चित्त इस व्यर्थ की वस्तु के लिए कलुषित तथा विचलित हो जाता है । यह साड़ी कैसे प्राप्त की जाय ? बस इस पर मेरा सारा चित्त लगा रहता है । बल प्राप्त करने के लिए चित्त को आत्मा का आनन्द लेना आवश्यक है ।

हमारे अबोध न होने के कारण हमारा चित्त अशान्त हो जाता है । इच्छाओं के कारण भी चित्त उत्तेजित हो उठता है । अतः हमें उन सुन्दर वस्तुओं की इच्छा करनी चाहिए जो हमारी भौतिक इच्छाओं को सौन्दर्य संवेदना की ओर ले जा सके । सौन्दर्य बोध की दृष्टि से समृद्ध वस्तु लीजिए । मान लीजिए की यह वस्तु साधारण, सादी तथा मशीनी लगती है, परन्तु यदि यह श्री शिव के पास होती तो उन्होंने किसी भी तरह इसे सुन्दर बनाया होता । श्री ब्रह्मदेव द्वारा रचित तथा श्री विष्णु द्वारा विकसित की गई हर वस्तु को सौन्दर्य प्रदान करना शिव का गुण है । सौन्दर्य-संवेदना की रचना का सूक्ष्म कार्य उन्ही का (शिव का) है । मेरे चित्रों में जो प्रकाश आदि आप देखते हैं यह सब शिव का कार्य है । वे केवल आपको विश्वस्त करना चाहते हैं । हस्त-कला की अथवा किसी सुन्दर वस्तु की इच्छा से जब आप अपनी इच्छा को कार्यान्वित करने लगेंगे तो शनैः शनैः आप चैतन्य लहरियों को पहचान लेंगे, क्योंकि इस प्रकार की सभी वस्तुओं में चैतन्य लहरियां होती है ।

चैतन्य लहरियों का आनन्द लेने के लिए भी शुद्ध इच्छा का होना आवश्यक है । चैतन्य लहरियों में लीन होने के पश्चात् नीरस इच्छा भी शुद्ध इच्छा बन जाती है । कुछ समय बाद आप केवल लहरियों की ही इच्छा करने लगते हैं । बिना लहरियों की कोई भी वस्तु आप नही खरीदेंगे । सभी इच्छाओं का अन्त चैतन्य में हो जाता है । भक्ति का आनन्द भी शिव की देन है । लहरियों का अभिप्राय नीरसता नही, इसका अर्थ है भक्ति रस । परमात्मा रूपी प्रेम-सागर ही भक्ति है । आप बस इसमें शराबोर हो जाते हैं । इस आनन्द की अभिव्यक्ति के लिए शब्द नही हैं, आप अपने को आत्मा से इस प्रकार सम्बन्धित पाते हैं जैसे अपने माता-पिता से । कोई अन्तर नही रह जाता । उस सागर में आप शराबोर हो जाते हैं । आप ही बूंद है - आप ही सागर

हैं, उस भक्ति में भी आप ही हैं । वह भक्ति बनावटी नहीं हो सकती । यह मानव-कृत भी नहीं है । सहज योग का आनन्द नीरस लहरियां-मात्र नहीं, शिव अपने भक्ति रूपीगुण को हमारे जीवन में भर देते हैं । हमारी हर गतिविधि आनन्द आच्छादित हो आनन्द गुंजन करती है कि परमात्मा को हम से कितना प्यार है । अहँ तथा बन्धन तब हमें छोड़ देते हैं ।

तीसरी नाड़ी के द्वारा हम मोह (ममत्व) का अनुभवकरते हैं । किसी के साथ ममत्व । जैसे यह मेरा बच्चा, पति, परिवार पत्नि, पिता, माता हैं । कुछ लोगों को अपने बच्चों से बड़ा मोह है । वे उनकी सराहना ही करते रहते हैं । और अचानक उन्हें पता चलता है कि बच्चा शैतान बन गया है । बच्चा माता पिता के सामने बोलने, उन्हें पीटने तथा अभद्र व्यवहार करने लगता है । हमें स्वयं से प्रश्न करना चाहिये कि "क्या इसी बच्चे की मैं प्रेम से देख भाल करता रहा हूं ?" "मैंने अपनी पत्नी के लिए इतना कुछ किया, वह भी मुझ से ऐसा व्यवहार कर रही है ।" इतना कुछ क्यों करें ? कोई आवश्यकता नहीं । यदि आप कर भी रहें हैं तो करके भूल जांय । कुछ सहजयोगियों के लिए मैंने बहुत कुछ किया और फिर भी उनका पतन हो गया । मैं जो महसूस करती हूं वह यह है कि "केवल ईश्वर ही जानते हैं कि उनका क्या अन्त होगा । क्या वे नर्क में जायेंगे ? उनका क्या होगा ? "यही चिन्ता है, यदि वे पापाचारी बन रहे हैं तो उनके जीवन तथा भविष्य की मुझे चिन्ता होती है । इस प्रकार के मोह को संस्कृत में "ममत्व" कहते हैं । याद रखें कि सहजयोगी ही आपके सम्बन्धी हैं । सहजयोगियों को परेशान करने वाला व्यक्ति - चाहे वह किसी की पत्नी या बच्चा ही क्यों न हो - मेरा नहीं हो सकता । "ऐसा मैं नहीं होने दूंगी ।" बहुत से अच्छे सहजयोगी कभी अपने पति - पत्नी या बच्चे का पक्ष नहीं लेते क्योंकि वे जानते हैं कि ऐसा करने से वे उन्हें पापाचारी बना कर उनका विनाश कर देंगे । उन्हें अपने उत्थान की ही चिन्ता है । ममत्व को विवेक - बुद्धि से जानना चाहिए । पेड़ का रस जड़ों से चलता है तो पेड़ के विभिन्न भागों में होता हुआ वापिस आ जाता है । यदि यह वृक्ष के किसी एक हिस्से से ही लिप्त हो जाय तो पूरा पेड़ सूख जाएगा तथा पेड़ का वह भाग भी । परन्तु वृक्ष के रस में हम से अधिक विवेक है । यही कारण था कि साधक सन्यास ले लिया करते थे । पति - पत्नी तथा बच्चे ही जब न होंगे तो कोई समस्या ही न होगी । परन्तु सहजयोग में कहीं अधिक महान कार्य करने को है । इसे सामाजिक राजनैतिक तथा आर्थिक जीवन में घुसना है । हमें पूरे विश्व को मुक्त करना है अपने उत्तरदायित्व को समझने का प्रयत्न कीजिए कि आप यहाँ केवल अपने तपोमय उत्थान के लिए नहीं हैं ।

प्रेम के सिवाय शिव कुछ भी नहीं । प्रेम सुधारता है, पोषण करता है और आपके हित की कामना करता है । शिव आपके हितों का ध्यान रखते हैं । प्रेम से जब आप दूसरों के हितों का ध्यान रख रहे होते हैं तो जीवन का सारा ढर्रा ही बदल जाता है । इतने लोगों से एकाकारिता हो जाने के कारण आप वास्तव में इसका आनन्द उठाते हैं । आप एक सर्वव्यापक व्यक्ति बन जाते हैं और यही दृष्टिकोण प्राप्त करना है । जब मुझे पता लगता है कि निम्न जाति या रंग के कारण किसी से दुर्व्यवहार किया, गया मेरी समझ में नहीं आता कि यह कैसे सम्भव है क्योंकि हम सब एक ही शरीर के अंग प्रत्यंग हैं । एक ही माँ से जन्में हम सब भाई-बहन हैं । परन्तु यह अनुभूती तभी सम्भव है जब आप अपने सम्बन्धों को इस महान, अथाह प्रेम-सागर में विसर्जित कर देते हैं । बिना ऐसा किए अपने कार्यों को उचित सिद्ध करने का प्रयास न कीजिए, केवल अपने पर दृष्टि रखिए । स्वयं देखिए कि क्या आप वास्तव में सबसे प्रेम करते हैं ? मैं अपने लिए कभी कुछ नहीं खरीदती । दूसरों को देने का आनन्द ही सभी कुछ है । यही सर्वाधिक-आनन्ददायी हैं । अपने बारे में

सोचें । मैं यहां क्यों हूं ? सभी का आनन्द लेने के लिए । ये सब साक्षात्कारी मनुष्य हैं । ये इतने सुन्दर कमल हैं । मैं भी कीचड़ में नहीं धसूंगा । मैं कमल हूं । हृदय-कमल को खोलने का यही तरीका है । ऐसे व्यक्ति की सुगन्ध भी अति सुन्दर होती है । हम सब में एकाकारिता हो जाने के बाद कहीं भी यदि कोई कार्य होता है तो हम उसका आनन्द उठाते हैं । शिव रूपी प्रेम-सागर में अपनी छोटी-छोटी लिप्साओं को विसर्जित करना आवश्यक है ।

चौथी नाड़ी अत्यन्त महत्वपूर्ण है । बायीं विशुद्धि से होती हुई यह हृदय में जाती है । हृदय से चल यह ऊपर को आज्ञा मार्ग से गुजरती है । इसकी चार पंखुड़ियां हैं । यही आपको तुर्या अवस्था प्रदान करती है । तीन अवस्थाएं हैं । निद्रावस्था में भूतकाल की बातें स्वप्न बन कर आते हैं । परन्तु 'सुषुप्त' नामक गहन निद्रा में जब आप पहुंच जाते हैं तो आपको सच्चे स्वप्न भी आते हैं । आप मेरे स्वप्न देख सकते हैं । अवचेतन के आकाश भाग में कुछ सुन्दर सूचनाएं दी जाती हैं । मान लो मैं इटली आती हूं तो सुषुप्त अवस्था में इटली के लोग जान सकते हैं कि मैं आ चुकी हूं । 'तुर्या' चौथी अवस्था है जिसमें आप निर्विचार समाधि में होते हैं । निर्विचारिता में आप अबोध हो जाते हैं । इस अवस्था में आप में लहरियां होती हैं । निर्विचारिता में किसी व्यक्ति से लिप्त नहीं हो सकते । उस 'तुर्या-स्थिति', निर्विचार समाधि में आप आ चुके हैं । इस अवस्था में जब आप होते हैं तो आपके अन्दर की चार पंखुड़ियां आपके मस्तिष्क में खुलती हैं । ये आपके हृदय से आपके मस्तिष्क में आती हैं और आप पूर्णतया समझ जाते हैं कि ईश्वर क्या है । परमात्मा को पूरी तरह जान जाते हैं । यही समय है जब व्यक्ति को सच्चा ज्ञान मिलता है । जब तक यह चार पंखुड़ियां नहीं खुलती आप बिछुड़ सकते हैं । आप समझ लें कि ये आपके हृदय से मस्तिष्क को आती हैं, मस्तिष्क से हृदय को नहीं । यह आपके मस्तिष्क की ओर भक्ति, अमृत के रूप में आती हैं । विवेक चूड़ामणि नामक अपनी सुंन्दर पुस्तक में शंकराचार्य ने परमात्मा को चेतन तथा चेतनता कहा । तब एक दुष्प्रवृति मनुष्य (सारमा) ने उनसे बहस करनी शुरू कर दी । वाद-विवाद को व्यर्थ जान शंकराचार्य ने माँ की प्रशंसा में सौन्दर्य लहरी की रचना की । ईश्वर का स्पर्श पा लेने के बाद आप किसी चीज का विश्लेषण या उस पर सन्देह कैसे कर सकते हैं । वे सर्व शक्तिमान परमात्मा हैं, सब जानते हैं, सब कुछ करते हैं, सब चीज का आनन्द लेते हैं । यही वास्तविक और सच्चा ज्ञान है ।

चक्र, लहरियां तथा कुंडलिनी का ज्ञान ही शुद्ध विद्या नहीं । सर्व शक्तिमान परमात्मा का ज्ञान ही शुद्ध विद्या है । यह ज्ञान बौद्धिक नहीं । हृदय से शुरू हो कर यह आपके मस्तिष्क को जाता है । एक ऐसा ज्ञान जो आपके आनन्द अनुभव से निकल आपके मस्तिष्क पर इस प्रकार छा जाता है कि आपका मस्तिष्क अब इसे नकार नहीं सकता । जैसे माँ को पा कर आप उसका प्यार जान जाते हैं । आप इसकी व्याख्या नहीं कर सकते, इसका उदय आपके हृदय से होता है ।

परमात्मा का ज्ञान-कि वह प्रेम है, सत्य है, सर्वज्ञ है - आपके अस्तित्व की पूर्णता अर्थात् निर्वाण का अंग प्रत्यंग बन जाता है । अपने हृदय को खोलिए क्योंकि इसकी शुरूआत मस्तिष्क से नहीं होती । लहरियों के माध्यम से लोगों को जांचने के स्थान पर हर समय स्वयं को जांचें । महा माया हों या कुछ और-माँ का वर्णन शब्दों से परे है । परमात्मा सर्व शक्तिमान हैं । उस प्रेम के सागर में जब - जब आप स्वयं को पूर्णतया सुरक्षित महसूस करते हैं - यही सुन्दर समर्पण होता है । आप सब इस अवस्था को प्राप्त हों, यही मेरी कामना है ।

महावीर पूजा, पर्थ - 28.3.91

श्री माताजी निर्मला देवी के भाषण का सारांश

आज हम श्री महावीर का जन्मदिन मना रहे हैं । श्री महावीर भैरवनाथ के अवतार हैं । आप उन्हें सेंट माइकल भी कह सकते हैं, जब कि हनुमान पिंगला नाड़ी पर सेंट गैबरील हैं । सेंट माइकल ईड़ा नाड़ी पर हैं । महावीर को बहुत खोज करनी पड़ी । वे देव दूत थे पर मानव रूप में प्रगटे । शरीर के वाम भाग के रहस्य तथा कार्य प्रणाली को उन्होंने खोजा ।

दायें भाग की अपेक्षा शरीर का बायां भाग अधिक उलझन पूर्ण है । आपने शरीर के बायें भाग में नाड़ियाँ देखी, ये एक के बाद एक बनाई गई हैं । शास्त्रों में इनका वर्णन है और इनको नाम भी दिये गए हैं । ये सातों नाड़ियां हमारे भूतकाल का ध्यान रखती है । उदाहरणतः हर क्षण भूत बनता है, हर वर्तमान भूतकाल बनता है । हमारे वर्तमान जीवन तथा हमारे पूर्व जीवन का भी भूत है । हमारी रचना के समय से अब तक हमारे सारे भूतकाल की रचना हमारे अन्दर है । अतः सारे मनोदैहिक रोगों को शरीर के बाईं ओर दिखाई पड़ने वाले तत्व बढ़ावा देते हैं । मान लीजिए कि किसी व्यक्ति को जिगर का रोग है और अचानक उस पर बायी ओर से आक्रमण हो जाता है - विशेषतः मूलाधार या बायी नाभी से, क्योंकि मूलाधार ही केवल एक चक्र है जिसे ईड़ा नाड़ी बायी ओर से तथा बायें स्वाधिष्ठान से जोड़ती है । अतः मूलाधार की समस्याएं मनुष्य के वश से परे हैं । बायी ओर स्थित इन चक्रों में से किसी पर भी आक्रमण होता है तो मनोदैहिक रोग हो जाते हैं ।

बायी ओर की समस्या के ज्ञान से ही मनोदैहिक रोग ठीक हो सकते हैं । मैंने बायी - ओर को दुस्साध्य क्यों कहा ? क्योंकि जब आप बायी ओर को चलने लगते हैं तो निःसन्देह यह रेखीय बन जाता है, परन्तु यह नीचे की ओर चलता है जबकि दांयी ओर की गति ऊपर को है । अतः अधो-गति हो यह कुण्डल बना लेता है । कुण्डल आपके अन्दर चलते हैं और आप उनमें खो जाते हैं । परन्तु दूसरे (दायें) भाग की गति ऊपर होने तथा इसमें कम कुण्डल होने के कारण इनसे निकल पाना सुगम है । अतः किसी भी कारणवश (भूतकाल के विषय में बहुत सोचने से, अपने लिए रोते रहने या हर समय शिकायतें करते रहने से) - जो लोग बांयी ओर को चले गये हैं उन्हें ठीक करना दांयी ओर को झुके लोगों की अपेक्षा कठिन है । दांयी ओर के लोग दूसरों के लिए तथा बांई ओर झुके लोग अपने लिए दुखःदायी होते हैं ।

इस तरह महावीर ने बांयी ओर को अच्छी तरह खोज निकाला । निःसन्देह वे इसके विषय में जानते थे । अतः उन्होंने विस्तृत रूप से बताया है कि जो व्यक्ति बांयी ओर को चले जातेहैं उनके साथ क्या घट सकता है । उन्होंने सात प्रकार के नर्क का भी वर्णन किया है जो कि इतना भयावह है कि मैं आपको बताना नही चाहती । इतना भयानक क्रूर, नीरस और घृणस्पद है कि जब आप जान जाते हैं कि अमुक गलती एवं पाप जो आपने किया था उसकी ये सजा है तो आपको अपने से घृणा हो जाती है । महावीर ने यह सब बताया । उन्होंने विस्तृत रूप से बताया कि बांयी ओर जाने का प्रयत्न करने वाले व्यक्ति को क्या दंड मिलना है । उन्होंने दायी ओर जाने वाले लोगों के विषय में भी बताया पर यह उतना विस्तार-पूर्वक न था जितना बायी ओर जाने वालों का ।

पांचों तत्वों के कारणात्मक शरीरों से आत्मा का सृजन होता है । उदाहरणतः पृथ्वी तत्व की कारणात्मक आत्मा

बहुत कम महसूस होती है । यह कारणत्मक पिण्डों तथा चक्रों से बनी होती है और सूक्ष्म तत्व (पैरासिम्पैथैटिक) पर इसका प्रभुत्व होता है । बाहर की ओर से यह मेरू-रज्जु (स्पाइनल कोर्ड) पर बैठ जाती है तथा सूक्ष्म नाड़ी तंत्र को गतिमय करती है । इसका संबंध हर चक्र के साथ है । मृत्यु होने पर हमारी कुण्डलिनी सहित आत्मा तथा हमारी जीवात्मा (स्पीरिट) आकाश में चली जाती है । यही आत्मा हमारे अस्तित्व की शेष गतिविधियों का नये अस्तित्व की ओर मार्ग दर्शन करती है । इस तरह से कार्य करती है । अभी तक किए हमारे सभी कर्म आत्मा पर लिखे हुए है । और अब खोज निकाला गया है कि किसी भी व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात् उसकी आत्मा गोल-गोल आकार की प्रतीत होती है । यह छल्ले बहुत से भी हो सकते हैं तथा एक भी । मेरे कहने पर उन्होंने इसे सूक्ष्म-दर्शी यंत्र से देखा और पाया कि हर कोशाणु को प्रतिबिम्बित करने वाले कोशाणु पर हमारी अन्तरआत्मा प्रतिबिम्बित है । कोशाणु को प्रतिबिम्बित करने वाला अंश, जो कि कोशाणु के एक ओर रखा होता है, भी इस आत्मा को प्रतिबिम्बित करता है तथा मुख्य आत्मा पीछे रहते हुए भी इस कोशाणु की देख भाल करने वाली प्रतिबिम्बित उस आत्मा को चलाती है । अब परावर्तक (रिफ़्लैक्टर) पर उन्होंने पाया कि इस प्रकार के सात छल्ले हैं - सात छल्ले क्योंकि आत्मा आठ (सात चक्र तथा मूलाधार) पर बैठती है ।

उसने खोज निकाला कि मृत्योपरान्त कुछ आत्माएं तो थोड़े दिनों में ही पुनः जन्म ले लेती है । यह अति साधारण प्रकार के लोग होते हैं । इस प्रकार वह एक प्रकार के वर्ग बना सका । वे एक प्रकार के वर्ग हैं जो थोड़े समय के लिए सामूहिक अव चेतना में बने रहने के पश्चात् पुनर्जन्म लेते हैं । वे लक्ष-विहीन, व्यर्थ तथा साधारण प्रकार के लोग होते हैं । परन्तु मृत्योपरान्त कुछ आत्माएं हवा में लटकी रहती है और उस व्यक्ति को खोजने की प्रतीक्षा करती है जो उनकी अपूर्ण इच्छाओं की पूर्ती कर सके । जैसे एक शराबी दूसरे जीवित शराबी का पता लगा सकता है । जीवित व्यक्ति को ज्यों ही शराब की लत लगने लगती है कुछ शराबी भूतात्माएं उसमें प्रवेश करके उसे पक्का शराबी बना सकती है । मुझे एक छोटे से कद बुत की औरत की याद है जिसने आकर कहा कि वह स्वयं से परेशान है । उसके पति ने मुझे बताया कि कभी-कभी वह स्त्री एक पूरी बोतल शराब बिना पानी मिलाये पी जाती है । मैंने उसकी ओर देखा कि इतनी छोटी सी औरत कैसे इतनी शराब पी सकती है । उस पर बन्धन डाल कर मैंने देखा कि एक विशाल नीग्रो उसके पीछे खड़ा है । अतः मैंने पूछा "तुम किसी नीग्रो को जानती हो ?" उछल कर एक दम उसने कहा कि "क्या आप उसे देख रही हैं ? वही पीता है, मैं नही पीती ।" निसन्देह मैंने उसे ठीक कर दिया और उसके बाद उसने शराब पूरी तरह छोड़ दी ।

तो जब भी आप किसी आदत में फंसने लगते हैं तो आपका अपने पर नियंत्रण समाप्त हो जाता है, कोई प्रेतात्मा आप में बैठ जाती है और आप समझ नही पाते कि उस आदत से छुटकारा कैसे पाया जाय । सहजयोग में जब कुण्डलिनी उठती है तो यह मृत-आत्माएं आपको छोड़ देती है और आप ठीक हो जाते हैं । मैं तुम्हें ये कहूंगी कि महावीर ने यह सब नही बताया । उन्होंने केवल नर्क की ही बात की । उन्होंने विस्तार से बताया कि जीवन में किस प्रकार के पाप के दण्ड स्वरूप आपको कौन सा नर्क प्राप्त होगा । अपना हित चाहने वाले मनुष्य के लिए नर्क के विषय में सोचना कितना भयावह है ।

अवतरण जब जन्म लेते हैं वो नार्कीय राक्षश भी लोगों को परेशान करने के लिए अवश्य जन्म लेते

हैं । वे गुरू रूप में भी जन्म ले सकते हैं, आजकल हम देखते है कि किस प्रकार गुरू रूप में आकर वे हमें पथ-भ्रष्ट कर रहे हैं । हमें पूर्णतया गतिहीन करने के लिए किस प्रकार वे हमारी बायी ओर तथा बायें स्वाधिष्ठान का प्रयोग करते हैं । भूत बाधा ग्रस्त व्यक्ति लहरियों को अनुभव नही कर पाता, हर तरह के कष्ट एवं लक्षण उस व्यक्ति में होते हैं । सहजयोग में हम महावीर का नाम लेते हैं । पिंगला नाड़ी पर भ्रमण करते हुए वे प्रति अहं के स्थान पर रूकते हैं । सहजयोग में आने के उपरान्त वे मनुष्य को नियन्त्रित एवं शुद्ध करने के लिए हर आवश्यक कार्य करते हैं ।

उन्हें महावीर क्यों कहा गया ? वीर बहादुर व्यक्ति को कहते हैं जो कि शूर हो, क्योंकि केवल ऐसा व्यक्ति ही भयंकर राक्षसों तथा शैतानों का नाश करने के लिए तथा हमारे अन्तस की आसुरी प्रवृत्तियों को भगाने के लिए मानव शरीर में प्रवेश कर सकता है । बिना महावीर की सहायता के हम यह कार्य नही कर सकते । आप उन्हें किसी भी नाम से बुला सकते हैं परन्तु मानव होने के कारण वे महावीर ही हैं । यह सब उन्ही के कारण सम्भव है, उन्ही की यह महान विशेषता है । नर्क की सारी धारणा, जिसका वर्णन शास्त्रों में है, सत्य है और विद्यमान है । कभी - कभी महावीर को वस्त्रविहीन व्यक्ति के रूप में देखा जाता है । एक बार बायी ओर का ज्ञान प्राप्त करने के लिए वे जंगल में ध्यान करने गये । जब वे ध्यान से उठे तो उनकी धोती एक कंटीली झाड़ी में फंस कर आधी फट गयी । तभी एक दरिद्र बालक के रूप में प्रकट हो श्री कृष्ण ने उनसे कपड़ों की याचना की । और कुछ न होने पर कृष्ण ने उनसे उनकी बची हुई धोती की भीख मांगी । कहते हैं कि श्री विष्णु रूपी उस बालक को महावीर ने वह धोती दे दी । केवल दो क्षणों के लिए निर्वस्त्र हो उन्होंने स्वयं को पत्तों से ढक लिया और अपने महल में जाकर वस्त्र धारण कर लिए । परन्तु लोग कितने अभद्र हैं । निर्वस्त्र घूमते हैं ये जैनी लोग ।

शाकाहार की यह सारी सनक अनावश्यक है, यही महावीर ने अपने जीवन में दर्शाया कि भोजन की चिन्ता व्यर्थ है । शाकाहार का सिद्धान्त इतने गलत तरीके से फैला कि अब मैंने लोगों से इसे पूरी तरह छोड़ देने को कह दिया है । अब देखिये कि वास्तव में महावीर क्या चाहते थे । प्रोटीन लिए बिना आप भूतों से नही लड़ सकते । जैन मत में शाकाहार का सिद्धांत नमिनाथ के द्वारा आया । नमिनाथ के विवाह के समय इतनी भेड़ - बकरियों को काटा गया कि उन्हें घृणा हो आयी । इस कुण्ठा में उन्होंने कहा कि वे मांस नहीं खायेंगे तथा इस तरह जैन धर्म में शाकाहार घुस गया जो अब तक चल रहा है । ये लोग अत्यन्त नीरस प्रकार के हैं । धन के पीछे ये दौड़ते ही रहते हैं, एक विशेष प्रकार का इनका आचरण होता है । महावीर की सारी शिक्षा के बाद भी इस प्रकार के है उनके शिष्य । अच्छा हो सहजयोग में हम ऐसा कुछ न करें । आपको जो बताया गया है उसे समझें । कार्य प्रणाली तथा पूरे विषय का ज्ञान आपको है । किसी तर्क या विज्ञापन के सम्मुख झुक कोई गलत रास्ता ले लेना उचित नही ।

मेरी बतायी बात को न तो अति व्रक ले जायें और नही उसे क्षुद्र माने । मैं जब आपसे यह सब बताती हूं तो आप समझें कि आपके स्वभाव और ज्ञान के अनुसार आपके लिए क्या उपयुक्त है । आपने वह स्वीकार करना है जो आपका पोषण करे तथा आपको सन्तुलन दे । स्वयं को सन्तुलित करने के लिए यदि आप महावीर के विषय में सोचते हैं तो आप श्री हनुमान के विषय में भी सोचिये । दोनों ही बातें आवश्यक हैं ।

ईस्टर पूजा
सिडनी - आस्ट्रेलिया
31.3.91

मृत्यु के पश्चात् पुनर्जीवित हुए ईसा की पूजा करने के लिए हम यहां हैं । उनकी मृत्यु के विषय में कई मत हैं, परन्तु वास्तव में उन्होंने स्वयं को पुनर्जीवित किया और भारत जा कर अपनी मां के साथ रहने लगे । अतः पुस्तकों में वर्णन नही है कि पूनर्जीवित होकर वे कहां गए । परन्तु पुराणों में वर्णित शलिवाहन राजवंश, जिससे मैं सम्बन्धित हूं, का एक राजा काश्मीर में ईसा से मिला और उनसे पूछा कि आपका नाम क्या है ? उन्होंने उत्तर दिया "मेरा नाम ईसा है ।" जब राजा ने उनसे उनका देश पूछा तो उन्होंने कहा "मैं जिस देश से आया हूं वह तुम्हारे और मेरे लिए अज्ञात है, और अब यहां मैं अपने देश में हूं ।" इस प्रकार उन्होंने भारतीय संस्कृति की सराहना की । वहां वे लोगों को रोग मुक्त किया करते थे । उनका और उनकी मां का मकबरा वहीं है । उनको समीप से न जानने वाले लोगों की बतायी गई भी बहुत सी कहानियां हैं ।

भारतीय शास्त्रों के अनुसार नैतिकता सिखाने के लिए ईसा वहां थे क्योंकि उनके जीवन में नैतिकता अत्यन्त महत्वपूर्ण थी । वे श्री गणेश का अवतरण थे, अतः उनके लिए गणेश का नियम भी अति महत्वपूर्ण था । इस नियम का वर्णन उन्होंने यह कह कर किया कि "दस धर्मादेशों में कहा गया है कि "आपको व्यभिचार (परगमन) नही करना चाहिए" परन्तु वास्तव में मैं तुम से कहता हूं कि आपकी दृष्टि भी अपवित्र नही होनी चाहिए । इस हद तक उन्होंने कहा कि आपकी दृष्टि भी अपवित्र नही होनी चाहिए । आजकल उनमें से (इसाई) अधिकतर लोग अनैतिकता से आंखें ऊपर नीचे घुमाते रहते हैं । एक उपनिषद में भी लिखा हुआ है कि स्त्रियों को देखना, उनके विषय में सोचना और उनसे अधिक बातें करना भी अनैतिकता है । हर देश में मैंने देखा है कि स्त्रियों का प्रयोग जन सम्पर्क के लिए होता है, मेरा अभिप्राय यह है कि वे जाकर उच्च पदाधिकारियों के साथ गप-शप और बात चीत इस तरह से करती हैं कि वे बहुत रीझ जाते हैं । अनुचित कृपा प्राप्ति का एक तरीका यह जन-सम्पर्क है । आंशिक रूप में यही बहुत से देशों की भ्रष्टता का कारण है ।

नैतिकता का सभी प्रकार की हिंसा के साथ चोली-दामन का साथ है । कोई भी व्यक्ति जो हिंसक है या माफिया, या जिसे जाति से बाहर माना जाता है, सभी बुरी तरह से अनैतिक लोग हैं । सहजयोग में नैतिकता हमारा मौलिक गुण होना चाहिए । श्री गणेश की भूमी पर उनका जन्मदिन मनाने का सौभाग्य हमें प्राप्त हुआ । उनके पवित्र और निश्कलंक जीवन के कारण ही वे पूजा-योग्य है । वे इतने पवित्र इसलिए थे कि वे लहरियों तथा चैतन्य के अतिरिक्त कुछ भी न थे । वे इतने पवित्र थे कि पानी पर चल सकते थे । उनकी पवित्रता के कारण मृत्यु भी उन्हें न मार सकी । शुद्धि-करण हमारा लक्ष्य होना चाहिए । हम पुनर्जन्म तथा द्विज बनने की बातें करते हैं । अंडे से निकले पक्षी को हम द्विज कहते हैं । इसी तरह हम भी अपने अहं तथा बन्धनों से ढंपे हुए हैं और द्विज बनने के लिए स्वयं को बन्धन मुक्त करते हैं । इस तरह से हम ब्रह्म तथा सर्वत्र विद्यमान शक्ति के विषय में जान सके । इसी प्रकार हम द्विज एवं ब्राह्मण बने : क्योंकि इसके बिना पूजा तथा मंत्रोच्चारण व्यर्थ हैं ।

परन्तु हमें अपनी पवित्रता का ध्यान रखना है । छोटे स्तर पर, जैसे ईसा ने कहा है, फुसफसाने से

अपवित्रता आ जाती है । फुसफसाने वाले लोग पीठ पीछे बातें करते हैं और इस प्रकार की बातों का आन्नद लेते हैं । यह छोटे स्तर की बात है और सहजयोग में यह पूर्णतया समाप्त हो जानी चाहिए क्योंकि इससे समस्याएँ पैदा होती है और सामूहिकता पर इसका कुप्रभाव पड़ता है । विशेषतया मैं स्त्रियों तथा अग्रआगणों की पत्नियों से प्रार्थना करूंगी क्योंकि उन पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी है । इस तरह की बातों में यदि वे दिलचस्पी लेती हैं तो वे भी दूसरों के निम्न स्तर पर आ रही हैं और उनके मातृत्व को भी चुनौती मिलती है । बच्चों को इस तरह की बातों की आज्ञा देने वाली माताएं निसन्देह बच्चों का पूरा जीवन नष्ट कर रही हैं । सहजयोग में दूसरों की बुराई करने वाले व्यक्ति अत्यंत भयानक होते हैं । व्यक्ति को इस प्रकार के विचारों से भी दूर रहना चाहिए । दूसरों के विरोध में जब हम बातें करने लगते हैं तो उनकी बुराईयाँ तो हमारे अन्दर आ ही जाती हैं साथ-साथ हमारा मस्तिष्क भी विकृत हो जाता है । स्त्रियों का,एक विशिष्ट प्रकार का जीवन तथा मित्रता होने के कारण,पुरूषों से अधिक इस मामले में उनका उत्तरदायित्व है । पुरूष यदि किसी से नाराज होंगे तो वो आपस में लड़कर इस मामले को समाप्त कर लेंगे । परन्तु औरतें इसे मन में रख लेगी और फिर कुछ-कुछ कहेंगी । यह बहुत बुरी बात है । यह रेंगते हुए उस कीड़े की भांति है जो रोग-संचारी भी है ।

नैतिकता केवल यौन सम्बन्धों के विषय में ही नही होती यह उससे कही अधिक है और कही विस्तृत । स्वयं को पवित्र करने के लिए हमें आत्मविश्लेषण की आवश्यकता है । रूस के लोग बहुत अन्तर्दर्शी हैं । यह बहुत अच्छी बात है यदि आप किसी रूसी लेखक का उपन्यास पढ़ें तो आप देखकर हैरान होंगे कि वे सब आत्मदर्शी हैं, उनके सभी चरित्र आत्मदर्शी हैं, वे देखना चाहते हैं कि मैंने यह कार्य क्यों किया ? उदाहरणतया: कोई व्यक्ति अत्यन्त आलसी है, वह अपना सारा समय पढ़ने-लिखने में लगा देता है परंन्तु अपने शरीर को कष्ट देने में असमर्थ है तो वह आत्मविश्लेषण करता है । मैं इतना आलसी क्यों हूँ ? या कोई व्यक्ति जो सदा क्रोधित रहता है लोग उसे पसन्द नही करते । तो दूसरे से क्रोध करने के स्थान पर उसे स्वयं को देखना चाहिए कि मैं दूसरों पर क्रोध क्यों कर रहा हूं ? दूसरे लोग मुझे पसन्द क्यों नही करते ? मेरे अन्दर ऐसा क्या है जो मुझे दु:खी बनाता है या मुझे कष्ट देता है ? तो आप पायेंगे कि या तो आप बंधनों में फंसे हैं और या व्यर्थ का अहम् आप से गलत कार्य करवा रहा है । आधुनिक संस्कृति मानव हित के लिए बहुत अधिक चिंतित नही है । आप नही जानते कि लोगों का लक्ष्य क्या है और वे क्या कर सकते हैं ? सहजयोग में आप पाखण्डी नही हो सकते । यदि आप सहजयोग में पूर्ण विश्वास नही करते, स्वयं को पवित्र नही कर लेते, स्वयं को सहजयोग में तल्लीन नही कर लेते और स्वयं में कूद नही पड़ते तो आप का भंडाफोड़ हो जायेगा और नि:सन्देह, आप सहजयोग के बाहर फेंक दिये जाओगे । मैं नही फेंकूंगी, मैं क्षमा कर दूंगी, परन्तु जैसे मैंने बताया है सहजयोग में अपकेन्द्री (सेन्ट्रीफ्यूगल) तथा अभिकेन्द्री (सेन्ट्रीपीटल) नामक दो शक्तियाँ होती हैं । अभिकेन्द्री शक्ति द्वारा आप आकर्षित होंगे परन्तु अपकेन्द्री शक्ति द्वारा आप बाहर फेंक दिये जायेंगे । अत: व्यक्ति को सावधान रहना है । क्योंकि आपने जो प्राप्त किया है वह इतना सुन्दर तथा स्वर्गीय है कि मैं भी आश्चर्यचकित रह जाती हूँ । परन्तु जैसा मैंने आपको बताया है स्वयं सर्वत्र विद्यमान शक्ति ने एक परिवर्तनशील भूमिका ले ली है । क्योंकि हम कृत-युग में हैं, यह कार्यकर रही है । एक युग और दूसरे युग के बीच में कृतयुग होता है, जैसे कलयुग था । कलयुग को सतयुग में जाना है, बीच के समय में कृतयुग है जबकि दुर्घटनाएँ और विकासशील गतिविधियाँ घटित हुई । अब विकास का अंतिम चरण शुरू हुआ है । इस प्रकार आप ये सब चित्र, सब चमत्कार ले पाते हैं क्योंकि ये चमत्कार, परमात्मा की सर्वत्र विद्यमान शक्ति की ही देन है । इस अवस्था में जबकि हमारे लिये यह सब सम्भव

है यदि हम पाखण्डी बनते हैं, तो हम स्वयं को हानि पहुँचा रहे हैं । अपनी आलोचना न करके यदि हम दूसरों की आलोचना करते हैं तो हम पिछड़ जायेंगे ।

समय की महत्ता को समझना आप के लिए आवश्यक है । सहजयोग बहुत अच्छा है यह सब भाई-बहन पाकर आज बहुत आन्नदित हैं । और आपके गुलाब की तरह से चमकते हुए चेहरे भी मैं देखती हूँ परन्तु अब भी आपके पतन की सम्भावना है । अतः कभी भी अपनी उन्नति से संतुष्ट न हों और स्वयं को पवित्र करते रहें । कुछ लोग सदा ये समझते हैं कि मैं उनसे नही कह रही दूसरे लोगों से कह रही हूँ । हमें आत्मविश्लेषण तथा ध्यान-धारणा करनी चाहिए । जब हम अपने दोषों को देखना शुरू करेंगे तो वे लुप्त होने लगेंगे । हमें आदर्श होना है ताकि लोग हमारे इस गुण को देख सकें । यदि हम दिखावा करेंगे तो लोग कहेंगे कि इस बनावट को देखो । अपने बनावटी पन को चाहे लोग न देख सकें आप का यह दोष वे देख सकते हैं । अतः इस अंहम प्रदर्शन से आपको सावधान रहना है । मानलो आपके पास कुछ धन है तो आप उसके प्रदर्शन का प्रयत्न करें यदि कोई सरकारी पदवी है तो आप उसे प्रदर्शित करने का प्रयत्न करेंगे । ये सब बनावटी बातें हैं । ये न तो आपको सम्पन्न बना रही हैं न ही सुन्दर, किसी भी तरह से यह आपको आवश्यक शक्ति नही प्रदान कर रही। ये बाह्य उपलब्धियां किसी के पास भी हो सकती हैं । इनमें कुछ भी महान नही है । आन्तरिक जीवन, जो आपका है, यही पवित्र होने का एक मात्र रास्ता है और इसी तरह ईसा के कथनानुसार आपका पुनर्जन्म हो सकता है । अब आप एक परिवार के अंग प्रत्यंग हैं, देखें आप किस प्रकार आचरण करते हैं ? आपके बच्चे कैसे हैं ? क्या वे सामूहिक है ? क्या वे परस्पर झगड़ते हैं ? क्या वे मिल बांट कर लेते हैं ? सर्वप्रथम आप भी यह करना प्रारम्भ करें अन्यथा आपके बच्चे भी ऐसा नही कर सकते । ईसा की ओर देखिये । अपने लक्ष्य के लिए वे पूरे चार वर्ष भी कार्य न कर सके । वहाँ वे केवल पुनर्जन्म पाने के लिए ही थे । इस छोटी सी अवधी में आप देखें, कि कितने स्थानों पर वे गये, कितने सुन्दर दृष्टान्त उन्होंने कहे और कितने लोगों से उन्होंने बातचीत की । अति साधारण ढंग से वे रहे । उनके पास ऐसे टेन्ट आदि न थे । पहाड़ी पर लोगों को एकत्रित कर वे उनसे बातचीत किया करते थे, 'पहाड़ी पर उपदेश' (सरमन आन दा माउंट) लोगों ने उन्हें सुना । परन्तु किसी ने भी उनके सार को आत्मसात् नही किया । उनके पास बहुत थोड़े (लगभग 12) शिष्य थे और वे भी उन्हें उनकी मृत्यु के पश्चात् समझ सकें । इससे पूर्व वे न समझ सके कि ईसा क्या थे । उनके पुनर्जन्म ने शिष्यों को सोचने पर विवश किया कि वो कौन थे, उन्होंने क्या किया और कैसे वे उनके शिष्य हैं ? वे साधारण मछुआरे थे । परन्तु उनकी बुद्धि तथा प्रगल्भता अचानक प्रकट हो उठी । उन्होंने द्विज बनने के बहुत से सुन्दर मार्ग दर्शाये। ईसाई मत पॉल और अगस्तिन के गलत नेतृत्व में प्रसारित हुआ और आज उस ईसाई मत को देखकर हमें धक्का पहुँचता है कि ईसा का मत ऐसा किस प्रकार हो सकता है । इस प्रकार के ईसाई मत का ईसा से कोई सरोकार नही । उन्होंने कहा था कि आप मुझे ईसा-ईसा कहकर पुकारेंगे और मैं तुम्हें नही पहचानूंगा ।

ईसा ने ये भी कहा था कि उनके सिर पर एक निशान होगा जिससे मैं उन्हें पहचान लूंगा । तो आप पहले से ही चिन्हित हैं, अपने अंतिम निर्णय में ईसा ने आपको चुना है तभी आप यहाँ हैं । परन्तु अब भी हमें जान लेना चाहिए कि हमारे पाखण्डी तथा जबानी जमाखर्च करने वाले होने की सम्भावना है । हो सकता है कि अभी भी हमने स्वयं का शुद्धिकरण करना हो, अतः अपना चित्त स्वयं पर डालें और देखें कि मैंने कहाँ गलती की है । क्रूशारोपण के समय उनके क्षमा के गुण को हमें याद रखना है । कैसे ईसा ने उन्हें क्षमा कर दिया क्योंकि वे न जानते थे कि वे क्या कर रहे हैं । अपने कार्यों की समझ होते हुए भी सहजयोग में लोग

क्रूसारोपित करने का प्रयत्न करते हैं । ऐसा करने वाले व्यक्ति के लिए, हो सकता है क्रूसारोपण उचित हो । इन क्रूसारोपणों से बचने के लिए आप का जीवन अत्यन्त शुद्ध, आदर्श एवं सुन्दर होना चाहिए । आपको अपने गुणों , अपनी महानता तथा धर्मपरायणता पर गर्व होना चाहिए । अन्यथा, आजकल की तरह लोग आपके गुणों के स्थान पर अपनी पागलपन की डींग हांकेंगे । दोनों ही चीजों की डींग मारने की आपको कोई आवश्यकता नही । परन्तु भले तथा सुन्दर गुणों पर गर्व आप कर सकते हैं । ईसा को परमात्मा की इच्छा के सम्मुख समर्पण करना पड़ा । ईसा ने परमपिता से कहा कि यदि वे इस जहर प्याले को हटा सकें तो बहुत अच्छा हो । परन्तु इन्कार करते हुए जब परमपिता ने कहा कि तुम्हें यह प्याला पीना ही पड़ेगा तो ईसा ने उसे बहुत बहादुरी तथा सुन्दरता से स्वीकार किया । हममें भी इसी प्रकार का समर्पण होना चाहिए । और इसी प्रकार के समर्पण भाव से हमें सबकुछ करना चाहिए । ये नही सोचना चाहिए कि इससे हमें कोई उपलब्धि प्राप्त हो रही है, प्रदर्शन आदि नही होना चाहिए । हम समर्पण कर रहे हैं इसलिए ये सब हो रहा है, ऐसा हमें सोचना चाहिए । समर्पण को हमें एक महान आशीष मानना चाहिए । हृदय पर अपने चित्त को टिका कर यदि आप कहें कि, "मैं स्वयं को समर्पित करता हूँ " तो काफी है । परन्तु आपको ये नही कहना चाहिए कि "माँ समर्पण में मेरी सहायता कीजिए" । इस प्रकार की प्रार्थनाएँ कभी-कभी वास्तविकता से पलायन (भागना) मात्र होती है । आप मेरी सहायता करें आदि । समर्पण अति सहज है । आपको कहना मात्र है, "श्री माताजी कृपया मेरे चित्त में आईये" और जैसे आप ये कहेंगे आप की कुण्डलिनी ऊपर आयेगी और आपका शुद्धिकरण करेगी । पर आप सदा उसे बिगाड़ेगें, यह समस्या है ।

अपने व्यक्तिगत जीवन से ईसा ने लोगों को बहुत प्रभावित किया । व्यक्तिगत जीवन में उन्होंने दर्शाया कि वे कितने शक्तिशाली थे और अपने पुनर्जन्म से उन्होंने दर्शाया कि वे मानव बुद्धि से परे की वस्तु है । इससे प्रकट होता है कि वे पवित्रता का साकार अवतरण थे । हमने स्वयं को इस प्रकार उन्नत करना है कि स्वयं को अन्दर से पवित्र कर सकें । अंहम् के जाल में फंसकर हम ये नही कहने वाले कि हम पूर्णत्व को प्राप्त हो गये हैं । अपने अन्तस में हम पूर्ण पवित्रता की याचनामात्र कर सकते हैं । बीती को बिसार कर आगे की सुधि लेते हुए आप केवल पवित्रता की याचना करें तो सारी घृणा तथा सारी आलोचना भावस्वतः ही लुप्त हो जायेंगे । पवित्रता आपको एक ऐसी अद्वितीय पदवी प्रदान करेगी कि लोग आपके जीवन के उदाहरण से परिवर्तित होंगे ।

गौरी पूजा - 8.4.1991
ऑकलैंड - न्यूज़ीलैंड -
परम पूज्य माता जी श्री निर्मला देवी के भाषण का सारांश

गौरी श्री गणेश की मां है और अपनी पवित्रता की रक्षा हेतु उन्होंने श्री गणेश को जन्म दिया । इसी प्रकार कुण्डलिनी ही गौरी है और हमारे मूलाधार चक्र पर श्री गणेश विराजमान हैं । मूलाधार गौरी कुण्डलिनी का निवास है और श्री गणेश कुण्डलिनी की रक्षा करते हैं । हमारी पवित्रता (अबोधिता) के वे देवता हैं । केवल श्री गणेश ही इस अवस्था में रहने के लिए समर्थ हैं क्योंकि (पैल्विक) श्रोणीय - चक्र हमारे मल-मूत्र

त्याग कार्य का ध्यान करता है और वातावरण की गन्दगी के प्रभाव-मुक्त वहां केवल श्री गणेश ही रह सकते हैं । वे इतने शुद्ध तथा अबोध हैं । कुण्डलिनी श्री गणेश की कुँआरी माँ है । लोग मां मैरी के विरूद्ध बोलने लगे हैं कि उन्हें कैसे पुत्र हो सका । इसका कारण हमारी नासमझी है कि परमात्मा के साम्राज्य में सभी कुछ सम्भव है । वे इन बातों से ऊपर हैं तथा पवित्र हैं । श्री गणेश यदि दुर्बल हो तो कुण्डलिनी को सहारा नही दिया जा सकता । कुण्डलिनी की जागृती के समय श्री गणेश अपने सारे कार्य रोक देते हैं । मैं कभी-कभी नौ-दस घन्टे एक ही स्थान पर बैठी रहती हूँ, उठती ही नहीं ।

कुण्डलिनी उठती हैं और श्री गणेश उन्हें आश्रय देते हैं तथा उनकी देख-भाल करते हैं । कुण्डलिनी एक पवित्र-ऊर्जा हैं । यह एक अलिप्तशक्ति है जो किसी भी चक्र या कार्य से लिप्त नही होती । केवल एक कार्य जो इसे करना होता है वह है धीरे-धीरे सन्तुलन पूर्वक सब चक्रों में से गुज़रना, चक्रों की सहनशक्ति के अनुसार उनकी आवश्यकताओं को पूरा करना तथा धीरे धीरे, नियमित रूप से सहस्रार को खोलना । वे साढ़े तीन कुण्डलों में हैं । इनका गणितीय महत्व है । यद्यपि ये पवित्र शक्ति हैं फिर भी इतनी विवेक पूर्ण, संवेदनशील तथा प्रेम-मय हैं कि जागृती के समय यह कोई जटिलता नही उत्पन्न करती । साधारणतया कुण्डलिनी के उठने का आपको पता ही नही चलता । पूरे तंत्र से आश्रित ये एक प्रकार से स्वतः ही ऊपर को जाती हैं । एक केन्द्र से दूसरे पर यह जाती हैं । सबसे पहले नीचे का चक्र इनके प्रवेश के लिए खुलता है, फिर सम्वर्धन करता है और फिर बन्द हो जाता है ताकि यह कुण्डलिनी को अपने स्थान पर रख सके । तब कुण्डलिनी ऊपर की ओर जा कर सहस्रार का छेदन करती है । यही राजयोग है ।

यह कोई बनावटी चीज नही है । पूरे सूक्ष्म तंत्र का स्वभाविक कार्य ही राज-योग है । मोटरकार को चालू कर पहिये को घुमाने मात्र से आप कार को आगे नही बढ़ा सकते । इसी प्रकार जब कुण्डलिनी उठती है तो वह स्वतः ही उठती है और छः चक्रों में से गुज़रती है । विशुद्धि चक्र पर यह विशुद्धि को खोलती है । जब यह विशुद्धि से गुजरती है तो इसके बहाव को चालू रखने के लिए जीभ मामूली सी खिंचती है । इस कार्य (जीभ का खिंचना) को 'खेचरी' कहते हैं । लोग जब गहन ध्यान में होते हैं तो अचानक वे स्वयं को 'खेचरी अवस्था' या 'खेचरी मुद्रा' में पाते हैं । उस अवस्था में यदि आप अपनी जीभ हिलायें तो आपके तालू से एक अमृत का बहाव शुरू हो जाता है । गहन ध्यान में आपको यह सब करने की आवश्यकता नही क्योंकि स्वतः ही यह आपकी जीभ को ठंडा करने लगता है । स्वतः ही आप खेचरी मुद्रा में प्रवेश कर जाते हैं । आज भी इस अनुभव को बहुत कम सहजयोगी प्राप्त कर पाते हैं । इसका कारण यह है कि न तो हम ध्यान करते हैं और न साक्षात्कार पर अपना चित्त टिकाते हैं । अपने उत्थान के लिए कार्य करने की अपेक्षा हम विशेष कर पश्चिम में, इसके विषय में बहुत सी बातें करते हैं । प्रतिदिन ध्यान करना हमारे लिए उसी तरह आवश्यक है जैसे हाथ धोना और दांत साफ करना । सुबह-शाम, दोनों समय, ध्यान करना हमारे लिए नितान्त आवश्यक है । हमें उन्नत होना है और बढ़ना है । अन्दर-बाहर से यह शुद्धि प्रतिदिन होनी चाहिए । व्यक्ति को उस प्रकार ध्यान करना चाहिए कि उत्थान में कुण्डलिनी को सहायता मिले, चक्र साफ हो जायें और अन्त में आप ध्यान-अवस्था में पहुँच जायें । प्रश्न यह नही है कि ध्यान में कैसे जायें, पर यह है कि हर समय ध्यान में कैसे रहें ।

कुण्डलिनी जब आज्ञा चक्र में पहुँचती है और इसे खोलती है तो आप निर्विचार समाधि में आ सकते हैं । आप केवल देखते मात्र हैं, किसी चीज़ में लिप्त नही होते । तूफान में फंसे किसी पेड़ के विषय में सोचिए

या भूचाल में भी यह वृक्ष बढ़ नही सकता । इसी प्रकार दूसरों से प्रेम तथा शान्ति के बिना हमारी उन्नति असम्भव है । सहजयोग में यदि आप दूसरों से शान्ति नही बना सकते, यदि आपके अन्दर सदा उथल-पुथल रहती है तो यह कुण्डलिनी उत्थित हो ही नही सकती । इसी कारण सामूहिकता महत्वपूर्ण है । यही कारण है कि विशुद्धि नही खुल पाती और सामूहिकता के बिना आपकी अध्यात्मिक उन्नती नही हो सकती । यह उल्टा वृक्ष है जिसकी जड़े मस्तिष्क में हैं । जड़ों को सीचने के बाद ही कुण्डलिनी नीचे की ओर जाकर विस्तृत होने लगती है । जब आप विस्तृत होने लगते हैं तभी अपने ईश्वरत्व की गहनता को आप छू पाते हैं । तब इस दैवत्व को आप कार्यान्वित करने लगते हैं और लोग जान जाते हैं कि आप योगी हैं, आप किसी और लोक से सम्बन्धित हैं तथा आप कोई महान व्यक्ति हैं ।

किसी चीज़ को आप कितने बार पढ़ते हैं, कितनी बार सहजयोग के विषय में बातचीत करते हैं, कितने बार आप नाम उच्चारण करते हैं - इन सब की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण है कि आपने कितने बार हृदय से अपने उत्थान की पवित्र इच्छा की । यदि आपमें यह शुद्ध इच्छा है तो पहला तथा अन्तिम कार्य जो आप करेंगे वह होगा ध्यान-धारणा । इसके बिना आप चल ही नही सकते । बिना ध्यान किए यदि आप सो जाएंगे तो आप सोचेंगे "ओह मेरा कोई कार्य बाकी रह गया है, दोष भावना से नही वैसे ही आप विचारेंगे, मेरा कुछ कार्य शेष रह गया है । गौरी की इस शक्ति का सम्मान होना ही चाहिए क्योंकि वही हमारी अपनी मां हैं, उन्ही ने हमें पुनर्जन्म दिया है । वे हमारे विषय में सब कुछ जानती हैं, वे अत्यन्त सुहृदय तथा करूण हैं । उत्थान का तथा चक्रभेदन का सारा कष्ट स्वयं झेल कर वे हमें पुनर्जन्म देती हैं । क्योंकि वे सब जानती हैं, सब समझती हैं, सारी व्यवस्था करती हैं और आपके अन्तस-निहित सारे सौन्दर्य को वे सामने लाती हैं । ये सभी चीजे एक जैसी हैं । जिस सत्य को आप खोजते हैं वो सौन्दर्य साही है और आनन्द भी वैसा ही है । आपको नही सोचना कि आनन्द, सत्य और सौन्दर्य भिन्न - भिन्न हैं । क्योंकि अभी तक हम उस अवस्था तक उन्नत नही हुए इसलिए हम केवल एक ही पक्ष लेते हैं । उस अवस्था को प्राप्त करने के पश्चात् ये सभी गुण एक जैसे लगते हैं, अन्तर समाप्त हो जाता है । ये एक ही हीरे के भिन्न पहलू हैं वो हीरा हैं, आप स्वयं, आपकी आत्मा ।

अतः साक्षात्कार तथा ज्ञान प्रदान करने के लिए हमें उनके (गौरी) प्रति कृतज्ञ होना है तथा याद रखना है कि हर समय हमें उन्ही को ही जागृत करना है, उनका विस्तार करना है और उन्ही की पूजा करनी है जिससे हमारा साक्षात्कार तथा उत्थान अक्षत रह सकें । केवल उत्थान ही पूरे विश्व को परिवर्तित करेगा । अतः आप गौरी से प्रार्थना करें कि "हमें शुद्ध कीजिए" आपको शुद्ध करना, आपके हृदय तथा मस्तिष्क शुद्ध कर आपके योग को अमरत्व प्रदान करना उन्ही का कार्य है । ऐसा होने पर ही हम परमात्मा के प्रेम की सुन्दर शक्ति के बहाव का अनुभव अपने अन्दर कर सकते हैं । इसके लिए हर आवश्यक कार्य आप करेंगे, पूर्णतया सामूहिकता में रहें, कुछ भी बलिदान करें और सहजयोग के प्रचार के लिए भी प्रयत्नशील रहें, क्योंकि जब आप सहजयोग को पेड़ की तरह फैलाऐंगे तो इसकी गहनता भी बढ़ेगी । यह कार्य उतनी ही सुन्दरता से होना चाहिए जितना कुण्डलिनी का जागरण । कुण्डलिनी ने आपको कोई कष्ट नही दिया, आपके लिए कोई समस्या नही बनाई, इससे हमें शिक्षा लेनी है । कुण्डलिनी इतनी सुहृदय, मधुर, भली और प्रभावशाली है । हमारे जीवन को वे अर्थ प्रदान करती हैं, हमारे जीवन के अर्थ को वे पूर्ण करती है, हमारी इच्छाओं की पूर्ती करती है और हमें उस बुलन्दी पर ले जाती है जहां हम पूरे ब्रहमाण्ड को अखण्ड रूप में देखने लगते हैं । कुण्डलिनी

हमें सामूहिक चेतना प्रदान करती हैं । अकेले कुण्डलिनी यह सब कार्य करती हैं । यदि वे किसी चक्र पर जाकर वहां के देवता को न जगाएं तो हम उसके फल को भी न पा सकें । यह सब उन्ही का कार्य है, उन्ही का उत्थान है, उन्ही की सूझबूझ तथा विवेक है जिसने हमें यह सुन्दर अवस्था प्रदान की है कि हम स्वयं को योगी कहते हैं ।

मैं आप सबसे अनुरोध करूंगी कि अपनी कुण्डलिनी पर चित्त को रखें, उसे हर समय जागृत रखें और अपनी चैतन्य लहरियों को बनाये रखें । न केवल अपनी लहरियों को ठीक रखें बल्कि दूसरों के प्रति अपने दृष्टिकोण में भी परिवर्तन लाएं । उनकी कमियों की बात न करें, उनकी अच्छाईयों को देखें तथा यह देखें कि भला कार्य करने की कितनी सामर्थ्य उनमें है । कुंआरी होते हुए भी गौरी कितनी विवेकपूर्ण हैं । इसी प्रकार हमें भी विवेक तथा संवेदनशील बनना है । व्यर्थ नष्ट करने को समय अब हमारे पास नही है क्योंकि हमें पूरे विश्व को बचाना है । यह हमारी जिम्मेवारी है । यदि अपने चक्रों को भी हम कार्यान्वित नही कर सकते तो किसी और की हम क्या सहायता करेंगे । यह किसी पंथ या संस्था की तरह नही जिसमें हम यह कह सकें कि क्योंकि हम अमुक संस्था से सम्बन्धित हैं इसलिए परमात्मा मुझे बचा लेंगे । सहजयोग में ऐसा कोई वायदा नही है । स्वर्ग का कोई टिकट यहां नही मिलता । परिश्रम तथा कुण्डलिनी और उसकी कार्य-प्रणाली की पूर्ण सूझ-बूझ से ही हमें यह प्राप्त करना होगा ।

विराट पूजा
मैलबोर्न-10.4.91

विराट आदि-पिता हैं जो हमारे मस्तिष्क में हैं और हमारी सामूहिकता के लिए कार्य करते हैं । जागृती के पश्चात् कुण्डलिनी तालू अस्थी को भेदती ही है और उससे पूर्व यह सहस्रार में प्रवेश करती है । सहस्रार क्षेत्र 1000 नाड़ियों से घिरा हुआ है तथा डाक्टरी भाषा में इसे लिम्बिक क्षेत्र कहते हैं । यह 1000 नाड़ियां विशुद्धि चक्र की सोलह महत्वपूर्ण नाड़ियों से जुड़ी हुई हैं । इसी कारण कहा जाता है कि श्री कृष्ण की (1000×16) 16,000 पत्नियां थी । उनकी सारी शक्तियां पत्नियों के रूप में थी और मेरी सारी शक्तियां बच्चों के रूप में हैं

उत्थान की ओर विकसित होते हुए हमें अपने सहस्रार पर जाना पड़ता है । आज के सहजयोग से सामूहिकता इतनी जुड़ी हुई है । इससे पूर्व यह केवल अगन्य-चक्र के स्तर तक थी । सहस्रार पर पहुंच कर कुण्डलिनी सारी नाड़ियों को प्रकाशित करती है और नाड़ियां शान्त एवं सुन्दर दीपों सम दिखाई पड़ती है । इन नाड़ियों का दृष्य इतना सुन्दरता था शान्ति-दायक होता है कि इससे अच्छा दृष्य मनुष्य पूरे विश्व में कही नही देख सकता । सामूहिकता तक पहुंच पाने के लिए सहस्रार को खोलने से पूर्व मुझे सामूहिकता पर अपना चित्त डालना पड़ा । मुझे लोगों को उनकी समस्याओं को, उनके परिवर्तन क्रम तथा संयोगों को, जिनके कारण वे दुःखी है, देखना पड़ा । उन सबको सात मुख्य भागों में बांटा जा सकता है परन्तु वे 21 भागों में बटे हैं । एक बायां, एक दायां और एक मध्य । इस प्रकार हमारी 21 मूलभूत समस्याएं हैं जिनका हल हमने खोजना है । सहजयोग के प्रारम्भ में मैंने मुख्य-तथा लोगों की शारीरिक, मानसिक और आर्थिक समस्याओं का निवारण करने का प्रयत्न किया । बीच - बीच कई दुर्घटनाएं भी हुई । आप जानते ही हैं जब वे आज्ञा पर पहुंचे तो उन्होंने सारे वातावरण को एक प्रकार की सत्ता के रूप में लेना शुरू कर दिया । यह परमात्मा की सत्ता न थी । परिणाम स्वरूप बहुत से लोग आज्ञा पर ही सहजयोग से बाहर चले गए । परन्तु जो लोग सहस्रार पर पहुंच गए हैं उन्हें समझना है कि सामूहिकता हमारे उत्थान का मूला-धार है । यदि आप ध्यान केन्द्र पर नही आते हैं, यदि आप सामूहिक नही हैं, यदि आप परस्पर मिलते जुलते नही तो आप अंगुली से कटे हुए नाखून की तरह हैं और परमात्मा को आपसे कुछ नही लेना देना । पेड़ से गिरे हुए फूल जिस तरह थोड़ी देर में मर जाते हैं, वही अवस्था आपकी है । सामूहिकता स्थापित न होने की अवस्था में सहजयोग समाप्त हो जायगा ।

सामूहिकता के बिना हम जीवित नही रह सकते । जिस तरह शरीर का मस्तिष्क से संबंध आवश्यक है, उसी प्रकार सामूहिकता के बगैर सहजयोगी जीवित नही रह सकते । अन्दर-बाहर सामूहिकता स्थापित होनी चाहिए । बाहर से कही अधिक आपको अपने अन्दर स्थापित होना है । अन्तस में जो है वही बाहर प्रकट होता है ।

अपने अन्दर सामूहिकता को स्थापित करने के लिए सबसे पहले हमें अन्तरदर्शन करना है कि हम अपने मस्तिष्क में सामूहिकता विरोधी क्या कर रहे हैं । हमारा मस्तिष्क किस प्रकार कार्य कर रहा है । भारत में, आपसे परिचित होते ही, लोग फौरन पता लगाएंगे कि इस व्यक्ति से क्या कार्य करवाया जा सकता है । यदि कोई किसी मंत्री का भाई है तो फौरन उसके पास पहुंच कर कहेंगे "क्या आप मेरा यह कार्य करेंगे ?" आप

उनसे भी आगे जा सकते हैं । किसी से परिचित होते आपको नही सोचना चाहिए कि इसके साथ मैं क्या व्यापार कर सकता हूँ । किसी के पास यदि धन है तो लोग उससे मिलकर व्यापार करना चाहेंगे । या वे उस व्यक्ति का प्रयोग अपने कार्यों के लिए करने लगेंगे । इसके विपरीत, आप ज्योंही किसी से मिलें तो देखें कि उसमें कौन सा गुण है और इसे मैं कैसे ग्रहण कर सकता हूँ । हम यहां अपनी अध्यात्मिक उन्नति के लिए हैं, अतः आपको सोचना चाहिए कि दूसरों की अच्छाई को अपने अन्दर कैसे उतारें । दुर्गुणों से आपका पोषण न होगा । अतः आप दूसरों के दुर्गुणों को देखने के स्थान पर उनके गुण खोजेंगे । यदि किसी में बुराइयां भी है तो उसके विषय में सोचना व्यर्थ है क्योंकि वे सुधरने वाले नही है । यह किसी और की समस्या है । श्रद्धा, सूझबूझ तथा प्रेम से दूसरों को देखिये क्योंकि वे भी हम में से एक हैं ।

यदि मुझे कुछ पकड़ना है तो मैं हाथ का प्रयोग करूंगी और चलने के लिए पैर का । इसी प्रकार आपको ज्ञान होना चाहिए कि आपके पोषण के लिए कौन सा सहजयोगी सहायक हो सकता है । तत्काल आपका मस्तिष्क शुद्ध हो जायगा । मैंने कहा कि हममें करूणा होनी चाहिए, तो आपमें करूणा कहां है ? दीवारों पर ? सहजयोग व्यवहार में आना चाहिए, हर समय मेरे फोटो को लेकर बैठा रहना सहजयोग का अभिप्रायः नही । इसका अभिप्राय है कि आपको करूणा तथा प्रेममय आचरण करना है । दूसरे से प्रेम-व्यवहार आप कैसे करते हैं ? यदि किसी से आप प्रेम करते हैं तो उसे प्रसन्न करने का प्रयत्न करते हैं । मैं जानती हूं कि आप सब मुझे प्रसन्न करने का प्रयत्न करते हैं, मेरे लिए तोहफ़े खरीदते हैं, कष्ट उठाकर भी मेरे लिए सुन्दर फूल लाते हैं, देखते हैं कि मुझे क्या अच्छा लगता है । मैं स्वीकार करती हूँ कि मैं बहुत-अधिक खुश हूँ , परन्तु यदि आप सामूहिकता को समझे और परस्पर एक-दूसरे को प्रसंन्न करने का प्रयत्न करें तो मैं अधिक प्रसन्न हूँगी । जिसका चित्त दूसरे सहजयोगियों को प्रसन्न करने पर होगा ऐसा सहजयोगी मुझे सर्वाधिक खुश - करता है । दूसरों को प्रसन्न करने का निर्णय लेते ही आपकी वाणी परिवर्तित हो मधुर बन जाती है । कैंची की तरह चलने वाली आपकी जीभ अब मधु की तरह मधुर हो जाती है । बहुत कम बोल कर भी आप अब दूसरों पर माधुर्य-वर्षा करते हैं । अपने प्रेम का आचरण आप कहां करते हैं ? हम अपने घर, चित्रों, साज-सज्जा आदि से प्रेम करते हैं, पर क्या मैं अपनी पत्नी-पति या अन्य सहजयोगियों से प्रेम करता हूँ ? अपनी सहज-संस्कृती में हमें करूणामय तथा प्रेममय आचरण करना आवश्यक है ।

तीसरे स्थान पर धैर्य है । मैं जानती हूँ कि कुछ बच्चे बहुत शरारती हैं, कुछ लोग इतने बातूनी है कि कभी-कभी वे मुझे सिर दर्द कर देते हैं । मैं सोचती हूँ कि अच्छा है इसी प्रकार मेरे मुँह को आराम मिलता है । दूसरी विधि यह है कि अपने दिमाग को वहां से हटाले और बोलने वाले को बोलने दें । अपनी बात कह कर वो आपको परेशान नही करेगा और सन्तुष्ट हो जायगा कि किसी ने उसकी बक-बक को सुना । अतः धैर्य इस कदर आवश्यक है कि अन्य लोग उसे देख सकें । कल मैं तीन घंटों तक बैठ कर सब प्रकार के लोगों तथा समस्याओं से हाथ मिलाती रही । अन्त में जो व्यक्ति आया वह बोला, "आपके धैर्य को देख कर मेरा धैर्य विकसित हो गया है ।" प्रेम धैर्य प्रदान करता है । यही प्रेम आपका पोषण करता है । यह पूर्णतया पक्की विधि है । मैंने यह नही कहा कि आप परमात्मा पर विश्वास करें, आप केवल स्वयं पर विश्वास करें । हम कहते रहते हैं कि हमें सबको क्षमा करना है पर हम इस प्रकार का आचरण नही करते । लोग छोटी-छोटी बातें याद रखते हैं । मैंने सुना है कि चोट पहुँचाने वाले व्यक्ति को याद रखने की सामर्थ्य सांप में होती है, परन्तु यहां तो यह सामर्थ्य मनुष्यों में भी है । पन्द्रह साल पहले की बात को भी याद रख कर लोग

कहते हैं कि फलां व्यक्ति ने मुझे चोट पहुँचाई थी, पर वे भूल जाते हैं उन्होंने लोगों को कैसे-कैसे कष्ट दिया । मानव मस्तिष्क में अहँ होने कारण बिना किसी दोष भावना के यह दूसरों को कष्ट देता चला जाता है और प्रति अहँ दूसरों द्वारा दिये गये कष्ट अपने में समोह कर सदा इनके विषय में शिकायत करता रहता है । आपने यह स्पष्ट अनुभव करना है कि इस तरह के आचरण से आप सामूहिकता को तोड़ रहे हैं ।

आपको समझना है कि आपके अगुआ के माध्यम से मेरा सम्बन्ध आपसे है । इसका अभिप्राय यह नहीं कि आप मुझ तक नहीं आ सकते । मान लो कि मैं अपना हाथ एक पिन (सुई) पर रखदूं तो हाथ तुरन्त ही वहां से हट जाएगा । इसका अर्थ यह है कि प्रतिक्रियात्मक कार्य भी हैं । पर प्रायः हर गति-विधि की सूचना मस्तिष्क को पहुँचती है । इसी प्रकार सहजयोग में आते ही यदि आप अपने अगुआ के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण विकसित कर लेते हैं तो अपने तथा अगुआ, दोनों के लिए, कठिनाई हो जाती है । पहली बात है कि आपको आलोचना नहीं करनी । अपनी बुद्धि का प्रयोग आलोचना के लिए न कीजिए । और पश्चिम में तो पहले ही बहुत आलोचना हो चुकी है । मेरा अभिप्राय है कि उनके आलोचना के नये तरीके हैं, आलोचकों के कारण सारी कला समाप्त हो गयी है । आलोचना के भय से कलाकार अपनी कला-प्रदर्शन से घबराते हैं । अब केवल आलोचना बाकी रह गई है और अलोचक दूसरे आलोचकों की आलोचना कर रहे हैं । बस । रचनात्मकता समाप्त हो गई है । अतः हर चीज के गुण पहचानने का प्रयत्न कीजिए । बच्चे तस्वीरें बनाते हैं या चित्रकला, अजीबोगरीब तरह से कभी-कभी ये मेरी शक्ल बनाते हैं, लेकिन कोई बात नहीं । उन्हें उत्साहित करने के लिए मैं सदा उनकी सराहना करती हूँ । हमारे मस्तिष्क में आलोचना का स्थान सराहना को ले लेना चाहिए । सराहना का प्रयोग हमारे आचरण में होना चाहिए, दूसरे लोगों की, उनके बच्चों की सराहना । इसका अभिप्राय यह भी नहीं कि बाकी सबकी तो आप सराहना करें और अपने पति या पत्नी को कष्ट दें । यह भी असन्तुलन है । परिवार आपकी पहली जिम्मेवारी है, परन्तु दूसरों की सराहना भी आप करें, और यह गुण आपमें तभी आ सकता है जब आपमें दूसरों के प्रति ईर्ष्या न हो । और यदि आपमें ईर्ष्या हो भी तो उसे भले के लिए उपयोग करें । भला कार्य है कि आप - अपने से अध्यात्मिकता में गहन व्यक्ति से ईर्ष्या करें और उससे ऊंचा उठने के लिए कार्य करें । ईर्ष्या यदि मुकाबले के लिए है तो आप अपने से अधिक दयालु, त्यागवान तथा धैर्यशील व्यक्ति से मुकाबला करें । तब यह मुकाबला अधिक पोषक बन जायगा ।

आक्रमणशीलता सामूहिकता का सबसे बड़ा शत्रु है । कुछ लोग मूलतः आक्रामक होते हैं, उनके बात करने का ढंग आक्रामक होता है, या बहुत आक्रामक परिवार से सम्बन्धित होते हैं, अथवा हीन-भावना या श्रेष्ठता-मनोग्रन्थी ग्रस्त होते हैं या उनमें असुरक्षा का भय होता है । उनमें भूत-बाधा भी हो सकती है । वे दूसरों पर प्रभुत्व जमाने का प्रयत्न करते हैं । अपने से उच्च लोगों के लिए उनके मन में बहुत विरोध होता है । यह दोष दूर होना आवश्यक है । आपको नम्र आचरण करना है, नम्र बनने का प्रयत्न कीजिए । एक चुटकला है - किसी सीढ़ी पर एक व्यक्ति ऊपर चढ़ रहा था और दूसरा नीचे को आ रहा था । ऊपर जाते हुए व्यक्ति ने दूसरे से कहा "कृपया चलिए" । तो उत्तर मिला "मैं मूर्खों के लिए नहीं चलता ।" ऊपर जाते हुए व्यक्ति ने कहा "पर मैं चलता हूँ " और ऊपर को बढ़ गया ।

इस प्रकार नम्रता कार्य करती है । दूसरे लोगों का आचरण आपके प्रति चाहे नम्र न हो आपको उनके प्रति नम्र होना है क्योंकि आप उनके बर्ताव को सहन करने के लिए सशक्त हैं । इस प्रकार की नम्रता का व्यवहार आपको करना है । यह गुण यदि आपमें आ जाएगा, तो आप स्वयं हैरान होंगे, कि आपके अन्दर

स्वार्थभाव समाप्त हो जाएगा । मैं जानती हूँ कि आप सब मुझ पर बहुत सा धन खर्च करने को तैयार हैं । मुझे उपहार देना चाहते हैं । उपहार लेना मैंने अब बंद कर दिया है । व्यक्तिगत रूप से अब आप मुझे कोई उपहार नही दे सकते । परन्तु उदारता एक सामान्य दशा है, करूणा की उदारता, धैर्य में उदारता, सहानुभूति में उदारता और भौतिकता की उदारता । मैं जब किसी चीज़ को देखती हूँ तो तत्काल सोचती हूँ कि यह मुझे खरीद लेनी चाहिए क्योंकि इसे मैं किसी भी स्त्री या पुरूष को, किसी उद्देश्य के लिए या किसी संस्था के लिए दे सकती हूँ । बाजार में होते हुए यदि मुझे प्यास लगे तो अपने लिए शीतल पेय खरीदने की बात मैं कभी नही सोचती । पूरी जिंदगी में अपने लिए फ्रिज मैंने कभी नही खोला परन्तु दूसरों के लिए मैं भागती-फिरती हूँ और उनके लिए खाना बनाती हूँ । अकेली यदि मैं कभी घर में हूँ और रसोइया न हो तो अपने लिए मैं खाना नही बनाती । घर में यदि कोई न हो, मेरे पति भी न हो तो मैं दो-दो-तीन-तीन दिन नही खाती और नौकर मेरे पति से शिकायत करते हैं ।

"वास्तव में मैंने खाना नही खाया, मुझे पता हीन था" । यदि मैं खाती हूँ तो केवल इस लिए कि वे घर पर होते हैं और मुझे उनके साथ खाना पड़ता है । मैं चाय भी नही पिया करती थी पर क्योंकि मेरे पति को चाय पंसद है मैं भी चाय पीती हूँ ताकि आदत बनी रहे, नही तो कठिनाई होंगी । यह केवल दूसरों के साथ समझौता करना है, यह कठिन नही है । यहाँ-वहाँ एक-दो बातें प्रसन्न करने वाली । दूसरों को प्रसन्न करने में कोई बुराई नही केवल पत्नी को ही यह नही करना, पति को भी करना चाहिए । इस तरह का आचरण केवल पति-पत्नी में नही होना चाहिए, माता-पिता और बच्चों में भी होना चाहिए । सहजयोग परिवार में भी आपको एक-दूसरे के साथ समझौता करना चाहिए । आप झगड़ा शुरू कर देते हैं, लड़ाई तो आपके अन्तस में होनी चाहिए । जहाँ तक मैं जानती हूँ मानव तथा सामूहिकता की समस्या अत्यंत पुरानी गाथा है ।

दिल्ली में हमने एक आश्रम शुरू किया है, प्रातः काल इकट्ठे होकर लोगों को वहाँ आते मैं देखती हूँ । यह एक मन्दिर, एक चर्च की तरह से है । लोग वहाँ आते हैं और बैठकर सामूहिक ध्यान करते हैं । सामूहिकता को अनुभव करने का सर्वोत्तम तरीका सामूहिक ध्यान है । क्योंकि मैं इस आश्रम में रहती हूँ, मैं यहाँ हूँ, अतः आप भी घर छोड़कर यहाँ आ जाईए । ध्यान-धारणा से आपका बहुत लाभ होगा । सामूहिका का विवेक जिनमें है, वे ही सामूहिक हो सकते हैं । मैलबोर्न में हमारे बहुत से लोग हैं, और अब लोगों की संख्या बहुत बढ़ जाती है, तो गहनता बहुत कम हो जाती है, और सामूहिकता की गहनता का अति शक्तिशाली होना आवश्यक है । आपमें परस्पर अति गहन सम्बन्ध होने चाहिए । किसी की प्रशंसा जब आप करते हैं तो मुझे बहुत अच्छा लगता है । साधारणतया मैंने देखा है कि मेरी उपस्थिती में लोग नकारात्मक लोगों के विषय में ही बात करते है । सकारात्मक लोगों के विषय में मैं कभी कुछ नही सुन पाती । अतः मुझे सकारात्मक लोगों, जो कि महान हैं और अच्छे कार्य कर रहे हैं, के विषय में जानकर प्रसन्नता होगी । नकारात्मक लोगों को भूल जाईए वे स्वयं ही छंट जाऐंगे । अतः अच्छे कार्य करने वाले सकारात्मक लोगों के विषय में बतलाना ही सर्वोत्तम है ।